अच्छी औरत : बुरी औरत

वीणा शिवपुरी

कुछ समय पहले एक कार्यशाला में सहभागियों के सामने एक सवाल रखा था।

अच्छी औरत कौन है?

बुरी औरत कौन है?

इसके जवाब में सबने अलग अलग बातें कहीं—

अच्छी औरत मेहनती होती है।
— सबकी सेवा करती है।
— त्यागमयी होती है।
— अच्छी औरत ज़ोर से नहीं बोलती।
— सिर झुका कर चलती है।
— शरीर ढक कर रखती है।

बुरी औरत हंस-हंस कर बोलती है।
— पहनने ओढ़ने की शौकीन होती है।
— बीड़ी सिगरेट पीती है।
— शराब पीती है।
— पराये मर्दों से बात करती है।

इसी तरह की और बहुत सी बातें सामने आईं। हमने यह पूछा कि क्या वे सब मानती हैं कि सज-संवर कर रहने वाली, हंस कर बात करने या सिगरेट पीने वाली सभी औरतें वास्तव में खराब होती हैं? सबने कहा नहीं, हम ऐसा नहीं सोचती।

तो फिर ये जवाब कहां से आए थे?

ये जवाब समाज के सिखाए हुए थे।

यानि हम अब कहीं न कहीं अपने चारों तरफ़ के प्रभाव से इतनी प्रभावित होती हैं कि न मानते हुए भी उन्हीं बातों को दोहराती हैं जो बचपन से घर-परिवार और समाज हमें सिखाता है।

औरत की भूमिका

औरत कैसी होनी चाहिए, उसे कैसे बोलना-चालना चाहिए, पत्नी, बेटी, बहन और मां के रूप में उसका व्यवहार कैसा होना चाहिए यह सब कुछ निश्चित कर दिया गया है। उसमें अलग-अलग व्यक्तित्व, पसंद-नापसंद के लिए जगह ही नहीं है। हर औरत के लिए एक तयशुदा सांचा तैयार है। नासमझ बच्ची को छोटी उम्र से ही डांट-डपट कर या प्यार, शिक्षा, उदाहरण के ज़रिए उस सांचे में फिट होने के लिए तैयार किया जाता है। अगर वह उस सांचे में भली तरह फिट हो गई तब तो वह अच्छी औरत है। यदि उसने उससे हट कर कुछ करने की कोशिश की या अपनी कुछ और पसंद जतलाई तो वह बुरी औरत कहलाती है।

पूरब हो या पश्चिम

अभी कुछ दिन पहले मुझे देश के पूर्वी भाग आसाम जाने का मौका मिला। वहां एक लड़की से बात करते हुए उसने कहा—"मां कहती है लड़की को एक मिनट भी खाली नहीं बैठना चाहिए।"

यह कोई नई बात नहीं है लेकिन फिर भी मुझे सुन कर ताज्जुब हुआ। मुझे आज से तीस-पैंतीस साल पहले राजस्थान के एक गांव में अपनी मां के कहे हुए शब्द याद आ गए।

मां मुझे कहती थी—"लड़की का काम प्यारा होता है, चाम नहीं।"

कितनी समानता है इन दोनों बातों में। चाहे देश का पश्चिमी भाग हो या पूरब। समय चाहे सन् 1993 हो या चालीस साल पहले का। हर मां एक-सी भाषा क्यों बोलती है। हर बेटी को एक ही सांचे में ढालने की कोशिश क्यों करती है।

क्योंकि उस मां को भी समाज ने यही सिखाया है। हम सब आगे आने वाली पीढ़ियों की बेटियों को भी वैसा ही बनाती जाती हैं। यह चक्र चलता रहता है। अगर ये चक्र टूट जाए तो जरूर कुछ नई तरह की औरतें निकलेंगी। जो शायद अपनी बेटियों को अपने व्यक्तित्व के हिसाब से पलने बढ़ने का मौका देंगी। तब शायद यह लड़की की अपनी मर्जी पर निर्भर होगा कि वह खेल-कूद की शौकीन हो या गंभीर रहने की। ज़ोर से बोले या धीरे। हंसे या चुप रहे। सीधी भाषा में यूं कहें कि वह वैसे जिए जैसा वह चाहे। आज औरत को वह आज़ादी नहीं है।

उस बालपन की उम्र में भी मैं मां की बात सुन कर अपने मन में सवाल करती थी—"मां मुझे सिर्फ़ इसलिए प्यार क्यों नहीं करती कि मैं इनकी बेटी हूं। अगर सिर्फ़ काम प्यारा होता है फिर तो ज़रूर ये नौकरानी को ज़्यादा प्यार करती होंगी जो बहुत काम करती है।"

औरत एक मोहरा

समाज की पितृसत्तात्मक बिसात में औरत एक मोहरा है। वह भी सबसे छोटा। उसकी चाल सिर्फ़ एक घर की है। अगर उसने उछल कर लम्बी चाल चलनी चाही तो उसे रोकना चाहिए, तभी खेल चलेगा।

समाज और परिवार में अगर औरत ने मेहनत करने, त्याग करने या दुख सहने से इनकार कर दिया तो पुरुषों का राज नहीं गिर जाएगा? बस इसीलिए बनाई है अच्छी औरत और बुरी औरत की छवि। यानि औरत की नाक में नकेल डाल दी है। अब वह मनमर्जी से कुछ नहीं करत सकती वरना बुरी कहलाएगी। और बुरा कौन कहलाना चाहता है?

लेकिन सवाल यह है कि अच्छी और बुरी का फ़ैसला हमारे हाथ में क्यों नहीं? □